Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 1, January-2022, ISSN 2230-7540

जनपद रूद्रप्रयाग में जातीय विश्लेषण एंव सामाजिक क्रिया-कलाप

मंजू पुरोहित*

सहायक अध्यापिका, सामान्य राजकीय इण्टर कालेज, मैठाणा विकासखण्ड- दशोली, जनपद- चमौली, उत्तराखंड

सारांश - *जनपद रूद्रप्रयाग के मूल निवासियों पर नजर डालें तों यह के मूल निवासियों के वंशजों को पहचानना मुश्किल हो जाता है क्योंकि यहाँ की जनसंख्या में विभिन्न जातियों-प्रजातियों के क्रमिक आवागमन के फलस्वरूप एक ऐसी मिश्रण तैयार हो गया है जिसे समझना एक दुष्कर कार्य है, तथापि कोल जाति को यहां के मूल निवसी वंशज (द्रवीणन) के रूप मे जाने जाते है जो वर्तमान समय में कोल्टा, कोली व शिल्पकार के रूप में जाने जाते हैं। कालान्तर में खरा मंगोलाइड तथा ककसाइड मूल की प्रजातियों ने इस क्षेत्र में क्रमिक रूप से प्रवेश किया, ये दोनों प्रजातियां वर्तमान जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है, यह 1200-2400 मीटर के मध्य शीतोष्ण कटिबन्धीय पेटी में वितरित है। खस अपने तीखे नैन-नक्श लम्बी नाक ऊँचा कद तथा गौरा वर्ण से आसानी से पहचाने जा सकते हैं। वर्तमान समय में इनकी अलग से गणना नही होती है और न ही सामाजिक दृष्टि से भेद किया जाता है। मध्यकालीन युग में इस क्षेत्र में हुये अन्तः प्रवास में आयी वैष्णव भारतीय वैदिक जनसंख्या से इनका मिश्रण बहुत अधिक हुआ। केवल घाटी क्षेत्र में ही कहीं-कहीं सामाजिक विभेद आज भी देखा जा सकता है। केदारनाथ यात्रा के माध्यम से भी भारत के विभिन्न भागों (बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पंजाब तथा कश्मीर इत्यादि) से आकार लोग यहाँ बसते रहे। प्राचीन समय में जब आवागमन के साधन नही थे तीर्थ यात्रियों का एक बडा भाग इन्हीं क्षेत्रों की मुख्य घाटियों में बस जाता था। सम्भवतः यहां का प्राकृतिक वातावरण भी उनको यहां बसने के लिए प्रेरित करता रहा होगा। क्षेत्र में प्रवास को एक सीमा तक यह भी कहा और माना जाता है कि केदारनाथ व मद्महेश्वर में नियुक्त दक्षिण भारतीय पुजारियों ने भी प्रभावित किया है। ये पुजारी ऊखीमठ में रावल शैव, कौशिक तथा खाट और वामशू, गुप्तकाशी में पण्डे शुक्ला वाजपेयी इत्यादि जाति के लोग रहते हैं। इस जनपद में कुछ परिवार ऐसे भी मिल जायेंगे जिनकी दूसरी तथा तीसरी पीढ़ी गढ़वाल में ही जन्मी है। इस प्रकार यात्रा पथों के आस-पास यहां भी जनसंख्या में पर्याप्त समिश्रण हुआ है। यह समिश्रण 1200 मीटर से नीचे के क्षेत्रों में अधिक मिलता है।*

कीवर्ड - *रूद्रप्रयाग, जाति, मेले, त्यौहार।*

----------X----------

प्रस्तावना

जनपद रूदप्रयाग के मूल निवासी भिलंगना, मन्दाकिनी जलागम में निसन्देह प्राचीनतम किरात जाति के थे। केदारीखण्ड उपपुराण में वशिष्ठ ऋषि का अपनी पत्नी के साथ हिंदाऊ (भिलंगना) क्षेत्र में निवास करके भील-किरातो के साथ कम्बल पहनाकर जंगल में शिकार खेलने का अब वर्णन आया है। इस सम्बन्ध में पं. पातीराम लिखते है कि "जब आर्य लोग उत्तराखण्ड में विस्तार कर रहे थे तो आदिवासी नागपुर, दशोली, पेनखण्ड में थें। इन दविडो को सिन्धु सभ्यता से समीकृत करते हैं। जो हड़प्पा मोहन जोदड़ो के पतन के बाद पहाडों की ओर दक्षिण को पलायन करने के लिए विवश हुए। शिल्पकार लोग खसियों में से ही निम्न वर्ग के थे। (नैथानी, पृष्ठ सं. *73)* साथ ही उस वर्ग में दास बनाये गये जिसमें किरातो को भी सम्मिलित करते हैं।

जनपद में सांस्कृतिक स्वरूप इस प्रकार से पाया जाता है-

ब्राहमण- पातीराम के अनुसार जैसे चाँदपुर क्षेत्र में ब्राहमणों का विशिष्ट वर्ग, सरोला कहलाया, वैसे ही नागपुर और मन्दाकिनी उपत्यका में यह निरोला कहलाया जो विवाह

www.ignited.in

और भोजन में बड़ा परहेज रखते थे। जबकि रतूड़ी ने निरोला वर्ग के ब्राह्मणें को विभिन्न स्थानों से वहां आकर बसने दिया जो एक सामूहिक नाम माना गया है। उनके अनुसार मैकोटा, थलासी, मूलतः ब्राहमण जाति के अन्तर्गत यहाँ पर पुरोहित जाति के अन्तर्गत सात गोत्र पाये जाते हैं तथा सात गोत्र के अन्दर ही शादी विवाह किये जाते हैं। एक ही गोत्र के लड़के-लड़कियॉ, भाई-बहन माने जाते हैं। पिता के गोत्र को रक्त संबध के कारण बचाना पड़ता है। जबकि बैंजवाल, कण्डयाल, दगालखी, कन्गाकुरूत, पुरोहित, गाररवत थे और सिलवाल कर्नाटक थे। थपलियाल लोग चाँदपुर क्षेत्र से आगे थे। मैथनी जी के अनुसार मैठाणी लोग जिन्हें दुमागी ब्राहमण कहा जाता है। ये मूलतः सूयोपासक थे और प्राचीन शक द्वीप (पंजाब) से आये थे। कुछ जातियां मध्यकाल में बाहर से आयी और अपनी पूजा पद्धति प्रवीणता से पृथक महत्व बनाये रखने में सार्थक हुई। जिनमें जगलोकी, देवशाली, वशिष्ठ आदि है। एक वर्ग केदारनाथ के पण्डों का है यहां के लोग इस घाटी के उन प्राचीनतम ब्राहमण में गिने जाते हैं जो शिव पूजा करते थे ओर निमात्य ग्रहण करते थे।

क्षत्रिय वर्ग- खस जाति के लोग आधुनिक काल में राजपूत वर्ग में शामिल हो गये हैं और उन्हें पहचानना कठिन है। इस जनपद के लोगों में अनेक राजपूत जातियां अपने को आठवीं सदी से लेकर 17 वीं सदी के काल में मैदानी भागों में राजनैतिक और धार्मिक उत्पीड़न के कारण, यहाँ आकर अपने पूर्वजों का बसना बताते हैं। उदाहरण के लिए बत्र्वाल और असवाल अपने को पंवार बताते हैं। जो आठवीं सदी में चाँदपुर के राजा कनकपाल के साथ आये थे। कुँवर, झिंक्वांड और रौतेलों के विवाह संबन्ध गढ़वाल राजवंश से होते रहने से सहज ही अनुमान होता है कि यह मैदानी भाग से उच्च क्षत्रिय कुलों से आये होंगे। एक वर्ग जो पहले नायक और सुनारों का था। वह आधुनिक काल में अनेक उपजातियों मंे बंटे। राजपूत जाति रावत और नेगियों में मिल गया है और अब पृथक पहचानना मुश्किल है। चैहान जाति के लोग भी असवालों में से हैं।

संभवतः अन्य गढ़वाली लोगों की तरह रूद्रप्रयाग जनपद के लोग भी प्रकृति के उपासक है। प्राचीन समय में यहाँ पर ब्राहाण धर्म का प्रचार हुआ। ईसा पूर्व तीसरी सदी में अशोक ने कई धर्म प्रचारकों को बौद्ध धर्म की स्थापना के लिए यहाँ भेजा, इसका प्रमाण तुगंनाथ, अतरमुनि नामक स्थानों में मिली। कुछ प्रतिमाओं से लगता है कि शंकराचार्य ने भी नवीं सदी के आरम्भ में बौद्ध प्रभाव को समाप्त करने की चेष्टा की और केदारनाथ व मदमहेश्वर मन्दिरों की स्थापना की जिसके पुजारी केवल मालावार (केरल) के रावल नम्बूदरी ब्राहाण ही हो सकता हैं। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में ग्रामीण देवताओं की उपासना होती है इनमें क्षेत्र पाल, नागराजा, नरसिंह, भैरव तथा ईष्ट देवता के रूप में विभिन्न देवी-देवताओं की अलग-अलग रूपों में पूजा होती है। मुख्य रूप से इस जनपद में तुगनाथ, मुन्जीमहाराज, जाख देवता, कार्तिक स्वामी व देवियों मे काली माता, मठियाणा देवी, हरियाली देवी, कोटि-माहेश्वरी तथा चण्डिका देवी की विशेष पर्वों के समय बड़ी पूजा अर्चना होती है। कही-कहीं पशुबलि भी दी जाती है। यहां पर लोग तन्त्र-मन्त्र पर भी विश्वास करते है जिससे भूत, पिचास व आंक्षरियों की भी पूजा की जाती है।

संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था- किसी क्षेत्र का समूचा व्यक्तित्व वहाँ की संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था से स्पष्ट होता है। जनपद रूद्रप्रयाग की संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था सम्पूर्ण गढ़वाल की संस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था का ही एक अभिन्न अंग है। इस क्षेत्र विशिष्ट संस्कृति की झलक दृष्टिगोचर होती है। यहाँ के पहाड़ो, नदियों, तालों, धार्मिक एवं प्राकृतिक स्थलों का गुणगान ऋगवेद काल से लेकर प्रत्येक युग के साहित्य में हुआ है। भारतीय आर्यो की सभ्यता संस्कृति के जितने सवाल प्रमाण गढवाल के पर्वत, नदी-घाटियॉ, देवस्थलों में ताल-गुफाओं में मिलते है उतने प्रमाण अन्य में नहीं मिलते।

संस्कृति- संस्कृति मानव जीवन का वह स्रोत है, जिसके आधार पर आत्मा-परमात्मा, जीवन-मरण, सुख-दुख, उलझी हुई घटनाओं का समाधान सरलता से किया जाता है। डा. शिवानन्द नौटियाल के अनुसार-"मानवीय संस्कारों द्वारा जो आत्मानन्द के धर्म हैं उनसे जो जीवन को विशुद्ध एवं व्यवहारोपयोगी बनाती है। वह संस्कृति है, या जिसका उपयोग भलीभाँति से जन कल्याण के लिए किया जाता है, वह संस्कृति है। या जिसका उपयोग भलीभाँति से जन कल्याण के लिए किया जाता है, वह संस्कृति है। संस्कृति का विस्तार अत्यधिक विविधता पूर्ण है जिनमें केवल भौतिक वस्तुएं ही नहीं बल्कि बोली-भाषा, रीति-रिवाज, कौशल, रूचियां तथा विश्वास भी समाविष्ट होते हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सक्रमित होते रहे हैं। टायलर के अनुसार "संस्कृति, ज्ञान-विश्वास कला, नैतिकता, न्याय, रीति-रिवाज तथा अन्य क्षमताओं या

आदतों का वह संकलन जो समाज द्वारा समाज का सदस्य होने के नाते अर्जित की जाती है।

संस्कृति का उद्भव जन समुदाय से होता है। समुदाय एक समाज होता है। संस्कृति में किसी भी समाज के रीति-रिवाज, विश्वास, धर्म कला-विज्ञान , नैतिकता, सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक विचार व राजनीतिक विचार, परम्परा आदि सभी तत्व आ जाते हैं यहां की संस्कृति विचार व राजनीतिक विचार, परम्परा आदि सभी तत्व आ जाते हैं यहां की संस्कृति में विभिन्नता एवं वैभव बड़े पैमाने पर देखने को नहीं मिलता। यह क्षेत्र गढ़वाल का अंग होने के कारण गढ़वाल संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। जिसे लोक संस्कृति से नाम से जाना जाता है।

गढ़वाली संस्कृति के दर्शक यहां के लोक गीतों व लोक नृत्यों में देखने को मिलते हैं। जिसमें यहां पर होने वाले सभी क्रिया कलाप (नृत्य, गीत, नाटक, खेलकूद) प्रकृति के अनुरूप होते हैं। जिसकी प्राकृतिक मनोहारिका, रमणीयता में मानव, नाच, गाकर अपना जीवन अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी उमंग के साथ हस-हसाकर व्यतीत कर देता है। संगीत गढ़वाली संस्कृति का हृदय है। यहां की हरी-भरी धरती तथा बुरांस के फूलों से लदी डाँडी काठियाँ ऐसी लगती है जैसे कोई संगीत सुना रही हो। बसन्त ऋतु में बादी, औजी (ढोलवादक) हुडकया गाते नाचते रहते हैं। यहां पर होने वाले लोक नृत्य, गीत, पर्व, मेले यहां के सांस्कृतिक जीवन के प्राण माने जाते हैं। जो पवित्र दैवीय स्थलों पर ही होते हैं। गढ़वाली संस्कृति में धार्मिक व सामाजिक नृत्य गीतों मांगलिक गीतों तथा व्यावसायिक जातियों के नृत्य-गीतों का आयोजन दीर्घकाल से चला आ रहा है।

सामाजिक व्यवस्था- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इसलिए वह समाज में रहकर संस्कृति का निर्माण करता है तथा उसके अनुसार ही अपनी सामाजिक-व्यवस्था को निर्धारित करता है। विभिन्न समाजिक वर्गो में वर्णव्यवस्था, जाति व्यवस्था, वैवाकि विधियां पारिवारिक तथ्य, रहन-सहन, खान-पान, भेष-भूषा, धर्म विश्वास, लिंग भेद, राजनैतिक चेतना आदि का स्वरूप भिन्न होता है और इन सभी भिन्नताओं के परिणाम से ही सामाजिक-विशेषतायें व्याप्त रहती है। इन व्यवस्थाओं के परिणाम से ही निर्देशित करती है। सामान्य रूप में जातीय, आर्थिक तथा शैक्षिक आधार पर समाज में उच्च तथा निम्न दो वर्ग भेद पाये जाते हैं। इस प्रकार किसी क्षेत्र में सांस्कृतिक सामंजस्य और विशेषतायें ही सामाजिक व्यवस्था एक दूसरे के पूरक होकर प्रभावित करते हैं।

जनपद रूद्रप्रयाग क्षेत्र में भी अन्य पर्वतीय भागों की तरह ही सामाजिक व्यवस्था अपनी जाति, वर्ग, धर्म व संस्कृति के अन्तर्गत ही निर्धारित की जाती है कि यहाँ जनसंख्या में विभिन्न जातियों प्रजातियों के क्रमिक आवागमन से एक मिश्रित व्यवस्था तैयार हुयी है। जनपद में अनेक धर्मो को मानने वाले सम्प्रदायों का समावेश रहा है। हिन्दुओं के अलावा गुरालगान व सिक्ख भी अल्प रूप में पाये जाते हैं। रूद्रप्रयाग जनपद में कई प्रकार की जातियां मिलती है। जिससे यहां का समाज एक मिश्रित समाज है। इस समाज के बारह प्रमुख अंग है। ब्राहमण, पाण्डे, राजपूत, हरिजन। ब्राहमणों में इस जनपद में गंगाडी ब्राहमण रहते हैं जिनका विवाह सम्बन्ध गंगाडी ब्राहमणों से ही होते हैं। जैसे-देवसाल में देवसाली, भट्टगाँव में भट्ट मक्कूमठ में मैठाणी, वैंजी में बैंजवाल, बमोली में देवसाली, हाट में हटवाल इत्यादि। राजपूत भी कई जातियों में बंटे हैं जैसे-नेगी, रावत, जगवांण, कपरवाण, सजवाण, गोस्वामी, बत्र्वाल, रौथाण, पुण्डीर, बिष्ट, भण्डारी आदि। अनुसुचित जाति में भी लोहार, कोहली, ओड (मिस्त्री), दर्जी (औजी) आदि सामाजिक व्यवस्था में बांटे हुए हैं। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग में छूआ-छूत का प्रचलन आदि काल से ही रहा है।

विवाह सम्बन्ध आमतौर से वैदिक कर्मकाण्ड के अनुसार होते हैं। इनमें कुछ जनजाति प्रथायें भी सम्मिलित है। अनुलोभ, प्रतिलोभ दोनो प्रकार के विवाह समाज में निषिद्ध है। बहु-पत्नी प्रथा आम हुआ करती थी, किन्तु अब इस प्रथा में भारी कमी आयी है और अब ना के बराबर है। प्राचीन समय में लड़की वालों को पैंसे देकर ब्याह रचाना एक प्रथा थी। लगभग सम्पूर्ण जनपद क्षेत्र में घर-जवांई प्रथा भी प्रचलित थी, किन्तु अब यह प्रथा भी लगभग समाप्त हो गयी है। जिसमें दुल्हा, दुल्हन के घर आकर बस जाता है तथा ससुर की सम्पति का मालिक बन जाता है। प्राचीन समय में निम्न जाति में विधवा-विवाह का भी प्रचलन था।

लोक नृत्य- जनपद रूद्रप्रयाग के निवासियों का पालन पोषण नृत्यकार शिव की कलात्मक भूमि में होता है। इस धरती की सुवारा प्रकृति की सहज मनोहारिणी छटा और मनमोहक, भावविभूतियों से युक्त इठलाती लजाती हुई वादियों ने यहां के जनजीवन का विकास किया है। यहां की धरती स्वयं ही भरत-नाट्यम का दूसरा रूप है। गढ़वाल के लोक-नृत्यों के पीछे एक प्राचीन परम्परा रही है। केदारखण्ड के अनुरूप शिव-पार्वती गुप्तकाशी में गुप्त रूप से रहते थे। यहीं पार्वती को शिवजी ने नृत्य शिक्षा दी थी। पाण्डव नृत्य इस क्षेत्र का अभिन्न अंग हैं। शीतकाल

www.ignited.in

में जब बर्फ से आच्छादित पहाडियां मौन धारण किये रहती हैं तो घाटी क्षेत्रों में पाडव-नृत्य के साथ ढोल-नगाड़ों की ध्वनि मन को मन को मंत्र-मुग्ध कर उत्साहित करने वाली होती है। जनपद के लगभग सभी गांवों में पाण्डव-नृत्य किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों के लोक नृत्य से प्रभावित होकर केशवचन्द्र वर्मा ने लिखा है कि "हिमालय के उत्तुंग गिरि शिखरों की महानता और नदियों का रसोद्वेग पहाड़ी क्षेत्रों के लोकनृत्यों में देखा जा सकता है।

पाण्डव नृत्य- जनपद रूद्रप्रयाग में पाण्व नृत्य (पाण्डौं नाच) अत्यन्त लोकप्रिय है। पाण्डव नृत्य माहाभारत में वर्णित कौरव-पाण्डवों की नृत्य और संगीत के रूप में कहानी है। मान्यता है कि कुरू-क्षेत्र युद्ध में हत्या, गोत्र हत्या पाप से मुक्ति हेतु शिवा राधन एंव दर्शनों को लालायित पाण्डव इसी भाग से उत्तर दिशा की ओर गये। पाण्डवों की स्मृति में आज भी इस भू-भाग में पाण्डव लीलाओं का आयोजन होता है। पाण्डव नृत्य, से सम्बधित प्रमुख गांवों मे बजीरा, त्यूंखर, लुठियाग, पौठी, बरसीर, मेदनपुर, बौठा सान्दर, परकण्डी सुरशाल देवा सोकरी, उखीमठ, किमाणा एवं पढाली आदि है। पांण्डव नृत्य के अन्तर्गत कमल व्यूह, चक्रव्यूह आदि आयोजन है।

बगड़वाल नृत्य- जीतू बगडवाल की ऐतिहासिक गाथा को गढ़वाल क्षेत्र में ढोलदमांऊ पर नृत्य रचना रूप में प्रदर्शित किया जाता है। प्रचलित मान्यता के अनुसार कोटि गांव का जीतू परियों (आंछरी) के श्रृगांर बशीभूत होकर अपना सर्वस्व खो देते है। किन्तु उसकी तृष्णाएं पूर्ण हो पाती। देवी देवताओं का मानवीयकरण यह गाथा बखूबी करती है। वर्तमान में ऊखीमठ तहसील के अन्तर्गत पैंज, पठाली, परकंडी-ककोला में यह परम्पर काफी लोकप्रिय है।

रामलीला- महर्षि बाल्मिकि द्वारा रामायण गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस पर आधारित मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्रीराम के जीवन चरित्र पर लीलाऐं इस जनपद में व्यापक स्तर पर मंचित की जाती है। लगभग 10 दिनों के आयोजन में रावण वध के दूसरे दिन भगवान राम का राजतिलक (राज्यभिषेक बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। जनपद में बामसू, गुप्तकाशी, ऊखीमठ, फाटा की रामलीलाऐं विख्यात है।

धार्मिक नृत्य गीत- इस कोटि में रूद्रप्रयाग जनपद में देवभावनाओं के नृत्यगीत और रणभूत आते है। देवभावना के नृत्यगीत के नृत्यगीतों में नागर्जा (नागराज) निरंकार, नरसिंह (नृसिंह) हनुमान, भैरव, हीत, घंडियाल, जाख, तुंगनाथ को देवता के रूप में नचाया जाता है। नागर्जा के जागर जिनमें कृष्ण का अलौकिक स्वरूप उजागर हुआ है यह बैसाख, जेठ तथा मंगसीर (मागशीर्ष) मे लगाये जाते है। देवी जागर में नव दुर्गा का पूजन चेत (चैत्र) व असूज (अश्विन) माह में होता है।

मंगसीर (मार्गशीर्ष) माह में ढोल- दमांऊ, तूरी रणसिंघा आदि वाद्य यंत्रों को बजाकर महाभारत के सम्पूर्ण आख्यानों के आधार पर पाण्डव नृत्य किया जाता है। यह नृत्य रूद्रप्रयाग जनपद क्षेत्र में गेंहू की बुआई के बाद शुरू होता है। जिसका समय लगभग 15 दिन से लेकर 3 माह तक होता है। अतृप्त आत्माओं में भूतों व आंछरिओं को नचाया जाता है। रणभूत नृत्यगीत गढ़वाली संस्कृति मे देवत्व प्राप्त वीर भावना प्रधान पवांडे गाये जाते हैं। जिन वीरों के पंवाडे हैं, उनके वंशज आज भी उन्हें पूजते हैं। वीर विशेष के ओजस्वी कार्यों को गाकर के धामी पश्वा को नचाया है। धामी, डौंर-थाली की कलाकारी से लोगोंं को मंत्र-मुग्ध कर देता है। जाख मे अंगारों के ऊपर जाख-देवता का नृत्य आंखों को आश्चर्य चकित करने वाला होता है।

सामाजिक नृत्यगीत- बसंत पंचमी के विषुवत संक्राति तक थाड़ अर्थात मण्डाण मे गाये जाने वाले थड़या, नृडूया, नृत्यगीत कलात्मकता लिये हुए चौंफुला नृत्यगीत, मायके न जाने वाली या मायके विहिन युवती की वेदना प्रकट करने वाले गीत, मायके आयी हुई विवाहित व कुंवारी कन्याओं द्वारा प्रदर्शित झुमैलो, नृत्यगीत, पर्वत की चोटियों या फूलों से लदे हुए पहाड़ी ढलानों पर मायके की स्मृति मे डूबी हुई विवाहित द्वारा गाया जाने वाला खुदेडू गीत मन को उन्मोदित करने वाला होता है। सामाजिक नृत्यगीतों मे मांगलिक अवसरों पर गाये जाने वाले गीत मांगलगीत कहलाते है। जिसमें सबसे पहले बहमा, अग्नि देवता, ईष्ट देवता, पंचनाम देवता, सूर्यदेवता, आकाश, धरती दशों दिशाओ के देवी देवताओं ,गणेश, नारायण पाण्डव, शिव आदि का आहवहन किया जाता है तत्पश्चात विवाह संस्कार के कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

व्यवसायिक जातियों के नृत्य गीत- औजियों (पेशेवर ढोल-वादक), जातियों का जनपद के जनजीवन मे विशेष महत्व रहा है। ये जातियों नृत्यगीतों मे बडें कुशल होते हैं। बसन्त ऋतु मे चैत माह श्नाचदु मैना" कहलाता है। जिसमें औजी जाति के लोग नाच-गाना करते थे।

प्रमुख मेले

बैशाखी मेला- अप्रैल माह के 13-14 तारीख को मन्दाकिनी घाटी मे अगस्त्यमुनी, फेगू मालतोली आदि स्थानों मे बड़ी उत्सुकता से मनाया जाता है। इसी दिन सूर्य मेष राशि मे प्रवेश करता है इसलिए हिन्दू कलेण्डर के अनुसार नव वर्ष का आरम्भ भी होता है।

जाख मेला - गुप्तकाशी से लगभग 5 किलो मीटर ऊपर जाख मंदिर स्थिर है। जाख को यक्ष देवता माना गया है। यह मेला 2 प्रविष्ट बैशाख को मनाया जाता है। यक्ष देव जलते आंगारों पर काफी देर तक नाचतें है। किन्तु उन्हें कुछ भी हानि नहीं होती । जन भावना है कि यक्ष मौसम का देवता की स्तुति करते हैं। देवस्थल ग्राम के ब्राहमण इसके पुजारी होते हैं। उबलते हुए गर्म तेल से स्नान करना और दहकते अंगारों पर नाचना जाख देवता को अत्यन्त प्रिय है, जन मानस हतप्रभ होकर यह दृश्य देखते हं और रोमांचित होते हैं।

नागेन्द देवता का मेला- जनपद रूद्रप्रयाग के जखोली तहसील स्थित बुंढणा ओर कोटि गांवो के मध्य सेरा मे नागेन्द देवता का मेला लगता है। नाग देव अर्थात शेषनाग (विष्णु अवतार) को लस्यापट्टी के 20 गांवों के देवता तथा इजरा ग्राम से जगदी देवी की डोली लेकर श्रद्धालू लोग जाते है।

त्यौहार- जनपद रूद्रप्रयाग के लोग अत्यन्त धार्मिक प्रवृति के है। अधिकांश त्यौहार विभिन्न देवी देवताओं के प्रति श्रद्वा आदर भाव रखते हुए मनाये जाते हैं। वर्तमान मे ये सभी मेलें और त्यौहार आधुनिकता भी लिए हैं। इन अवसरों पर कुछ ग्रामीण अंचलों मे अनेक क्रीड़ा प्रतियोगिताऐं भी आयोजित की जाती है। ग्रामीणों का खरीददारी के साथ भरपूर मनोंरजन के भी अवसर ये त्यौहार प्रदान करता है। हिन्दुओं के प्रमुख त्यौहार दशहरा, होली, दीवाली, जन्माष्टमी, रक्षाबन्धन, राम नवमी, बसंत पंचमी, नागपंचमी एवं शिव रात्रि, आदि जनपद मे समय-समय पर पुरी धार्मिक परम्पराओं के साथ मनाए जाते हैं। वैशाखी पर्व, कार्तिक पूर्णिमा, मंकर सक्रांति, पंचमी (बंसत) विशेष ऋतु परिवर्तन सूचक त्यौहार हैं।

मंकर संक्राति- प्रायः 14-15 जनवरी को जब सूर्य मकर राशि मे प्रवेश करता है तब यह पर्व मनाया जाता है। लोक मान्यता है कि इस पर्व से देवताओं का दिन आरम्भ हो जाता है जो 6 माह तक चलता है जबकि दक्षिणायन सूर्य अवधि काल को देव रात्रि काल माना जाता है। इस अवसर पर लोग पवित्र नदियों में स्नान करते हैं। इस दिन सूर्य धनु राशि को छोड़कर मकर राशि मे प्रवेश करता है। इस त्यौहार पर गुड़, घी व खिचड़ी खायी जाती हैं रंग बिरंगी पंतग बच्चे उड़ाते हैं इसे दान व स्नान का पर्व मानते हैं यह त्यौहार सुख शांति का प्रतीक है।

बंसत पंचमी- माँ सरस्वती की पूजा पर बंसत पंचमी का त्यौहार मनाया जाता है। पीले वस्त्र लोग पहनते हैं तथा बंसत पंचमी के त्यौहार पर चैंफले तथा चांछरी व संगीत के साथ मनाया जाता है। रूद्रप्रयाग जनपद गढ़वाल क्षेत्र का जातीय एवं समाजिक तथा संस्कृति का केन्द्र रहा है। नया राज्य उत्तराखण्ड निर्माण के पश्चात् गढ़वाल क्षेत्र के ग्रामीणों द्वारा मैदानी क्षेत्रों में देहरादून, ऋषिकेश, हरिद्वार, श्रीनगर की ओर प्रवास किया जिससे कि मिश्रित समाज दृष्टिगत होता है परन्तु गढ़वाल का केन्द्र रूद्रप्रयाग जनपद में जातीय सामाजिक तथा संस्कृति को संरक्षित किया है साथ ही समय के बदलाऊ की झलक के साथ-साथ यहां पर विभिन्न प्रकार के धार्मिक स्थलों का आधुनिकीकरण एवं संस्कृति तथा प्राकृतिक सुन्दरता से इस क्षेत्र में पर्यटन एवं तीर्थ यात्रा का सैलाव बढा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कठोच, यशवन्त सिंह, 2007, गढ़वाल का इतिहास, भागीरथ प्रकाशन ग्रह, आंचलिक साहित्य प्रकाशक, टिहरी गढ़वाल।

2. नैथानी, शिवप्रसाद, 2006, उत्तराखण्ड के तीर्थस्थल एवं मन्दिर, पवेत्री प्रकाशन, भक्तियाना, श्रीनगर पौड़ी गढ़वाल।

3. नैथानी, शिवप्रसाद, 2006, उत्तराखण्ड का सांस्कृतिक इतिहास, पवेत्री प्रकाशन, भक्तियाना, श्रीनगर पौड़ी गढ़वाल।

Corresponding Author

मंजू पुरोहित*

सहायक अध्यापिका, सामान्य राजकीय इण्टर कालेज, मैठाणा विकासखण्ड- दशोली, जनपद- चमौली, उत्तराखंड

www.ignited.in